

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

सरोज देवी

बनाम

बिहार राज्य एवं अन्य

2015 की दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद सं. 5827

21 सितम्बर 2023

(माननीय न्यायमूर्ति श्री मोहित कुमार शाह)

विचार के लिए मुद्दा

- क्या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत दाखिल रिट याचिका उस स्थिति में बनाए रखने योग्य है जब किसी व्यक्ति की मृत्यु राज्य के किसी निकाय या उसके उपक्रम की लापरवाही से घटित दुर्घटना के कारण हुई हो और प्रतिकर की मांग की गई हो?
- क्या राष्ट्रीय भवन निर्माण निगम (एनबीसीसी) एनबीसीसी के इस दावे के बावजूद कि सावधानियां बरती गई थीं, "सख्त दायित्व" के सिद्धांत के तहत याचिकाकर्ता को उसके बेटे की मृत्यु के लिए मुआवजा देने के लिए उत्तरदायी है?

हेडनोट्स

अभिलेख पर उत्तरदाता प्राधिकारियों के स्थापित कृत्य एवं उपेक्षाएँ परिलक्षित हैं और उसके परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता के मौलिक अधिकार का हनन हुआ है, ऐसी स्थिति में रिट न्यायालय मौद्रिक क्षतिपूर्ति प्रदान कर सकता है। यह वह मामला होगा जहाँ राज्य अथवा उसकी अभिकरण अपने ऊपर निहित दायित्व-पालन में असफल रही हो, जिसके परिणामस्वरूप किसी व्यक्ति के जीवन अथवा अंग का हनन हुआ हो। अतः संविधान का अनुच्छेद 21 लागू होता है और संविधान का अनुच्छेद 226 मौद्रिक क्षतिपूर्ति के लिए प्रयोज्य है, क्योंकि ऐसा प्रतिकार सार्वजनिक विधि में उपलब्ध है जो मौलिक अधिकारों के उल्लंघन

हेतु कठोर दायित्व पर आधारित है। (कंडिका 18)

चूँकि संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत प्रदत्त अविच्छेद्य अधिकारों का स्थापित उल्लंघन हुआ है, अतः न्यायालय मौद्रिक क्षतिपूर्ति प्रदान करने में सक्षम है, क्योंकि राज्य एवं उसकी अभिकरण अर्थात् एनबीसीसी अपने कर्तव्यों के निर्वहन में विफल रही है। इसके अतिरिक्त “कठोर दायित्व” का सिद्धांत भी उस व्यक्ति पर दायित्व डालता है, जो ऐसा कार्य करता है जिसमें मानव जीवन के लिए खतरनाक अथवा जोखिमपूर्ण परिस्थितियाँ शामिल हों, भले ही यह मान लिया जाए कि सभी सुरक्षा उपाय अपनाए गए थे। अतः प्रबंधकों/ठेकेदारों की किसी लापरवाही या असावधानी से परे, उत्तरदाता एनबीसीसी विधि-न्याय के अंतर्गत उत्तरदायी है कि वह याचिकाकर्ता को उसके पुत्र की मृत्यु से उत्पन्न क्षति हेतु क्षतिपूर्ति दे। (कंडिका 20)

न्याय दृष्टान्त

रामानंद राय बनाम बिहार राज्य, 2021 (1) पी.एल.जे.आर. 361; उत्तर प्रदेश राज्य सहकारी भूमि विकास बैंक लिमिटेड बनाम चंद्रभान दुबे, (1999) 1 एस.सी.सी. 741; एयर इंडिया सांविधिक निगम बनाम यूनाइटेड लेबर यूनियन, (1997) 9 एस.सी.सी. 377; नीलाबती बेहेरा बनाम उड़ीसा राज्य, (1993) 2 एस.सी.सी. 746; रायलैण्ड्स बनाम फ्लेचर, (1868) एल.आर. 3 एच.एल. 330; एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ, (1987) 1 एस.सी.सी. 395; रुदुल साह बनाम बिहार राज्य, (1983) 4 एस.सी.सी. 141; डी.के. बसु बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (1997) 1 एस.सी.सी. 416; रेलवे बोर्ड अध्यक्ष बनाम चंद्रिमा दास, (2000) 2 एस.सी.सी. 465; सुबे सिंह बनाम हरियाणा राज्य, (2006) 3 एस.सी.सी. 178; दिल्ली नगर निगम बनाम उपहार त्रासदी पीड़ित संघ, (2011) 14 एस.सी.सी. 481; रघुवंश देवचंद भसीन बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2012) 9 एस.सी.सी. 791; इन री: इंडियन वूमन सेज़ गैंग-रेपड ऑन ऑर्डर्स ऑफ़ विलेज कोर्ट पब्लिशड इन बिज़नेस एंड फ़ाइनैशियल न्यूज़ डेटेड 23.01.2014, (2014) 4 एससीसी 786; रमन बनाम उत्तर हरियाणा बिजली वितरण निगम लिमिटेड, (2014) 15 एस.सी.सी. 1; अनिल कुमार गुप्ता बनाम भारत संघ, (2016) 14 एस.सी.सी.

58; अनीता ठाकुर बनाम जम्मू व कश्मीर राज्य, (2016) 15 एस.सी.सी. 525; सुश्री ज बनाम बिहार राज्य, (2018) 11 एस.सी.सी. 572; निज़ाम्स इंस्टिट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेस बनाम प्रशांत एस. धनका, (2009) 6 एस.सी.सी. 1; महाप्रबंधक, केरल एस.आर.टी.सी. बनाम सुशम्मा थॉमस, (1994) 2 एस.सी.सी. 176; ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम राम प्रसाद वर्मा, (2009) 2 एस.सी.सी. 712; उपहार त्रासदी पीड़ित संघ बनाम भारत संघ, (2011) 14 एस.सी.सी. 481; म.प्र. विद्युत मंडल बनाम शैल कुमारी, (2002) 2 एस.सी.सी. 162; नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम प्रणय सेठी, (2017) 16 एस.सी.सी. 680; सरला वर्मा बनाम दिल्ली परिवहन निगम, (2009) 6 एस.सी.सी. 121; मधु कौर बनाम एन.सी.टी. दिल्ली सरकार, डब्ल्यू.पी. (सी) सं. 1077/2007 (दिल्ली उच्च न्यायालय)

अधिनियमों की सूची

भारत का संविधान (अनुच्छेद 21, अनुच्छेद 226); भारतीय दंड संहिता (धारा 304 भाग-II); आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005; मोटरयान अधिनियम, 1988; सामान्य धाराएँ अधिनियम, 1897

मुख्य शब्दों की सूची

लोक विधि प्रतिकर; अनुच्छेद 21; अनुच्छेद 226; सख्त उत्तरदायित्व; खतरनाक गतिविधि; एनबीसीसी; मौलिक अधिकार; खुला नाला दुर्घटना; मृत्यु प्रतिकर; रायलैण्ड्स बनाम फ्लेचर; संप्रभु उन्मुक्ति; दीवानी विविध रिट अधिकारिता

प्रकरण से उत्पन्न

याचिकाकर्ता सरोज देवी के पुत्र रंजीत कुमार की 19.01.2010 को कंकड़बाग, पटना में एनबीसीसी द्वारा खोदे गए निर्माणाधीन नाले में गिर जाने से मृत्यु।

पक्षकारों की ओर से उपस्थिति

याचिकाकर्ता की ओर से: श्री विश्वजीत सिंह, अधिवक्ता

राज्य की ओर से: श्री पंकज कुमार (एससी-12), श्री अनुज कुमार (एससी-12 से एसी)

उत्तरदाता सं. 5 (एनबीसीसी) की ओर से: श्री सतीश कुमार सिन्हा, अधिवक्ता

रिपोर्टर द्वारा हेडनोट बनाया गया: अमित कुमार मल्लिक, अधिवक्ता

माननीय पटना उच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में
2015 की दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद सं. 5827

=====

सरोज देवी, पति- स्वर्गीय राम भूषण सिंह, निवासी मोहल्ला इंदिरा नगर, थाना- कंकड़बाग
 जिला- पटना।

... .. याचिकाकर्ता/ओं

बनाम

1. मुख्य सचिव, बिहार, पटना के माध्यम से बिहार राज्य।
2. प्रधान सचिव, शहरी विकास और आवास विभाग, बिहार सरकार, विकास भवन, पटना,
 बिहार।
3. आयुक्त, पटना मंडल, बिहार
4. जिला दंडाधिकारी, पटना, बिहार।
5. राष्ट्रीय भवन निर्माण निगम, अपने प्रबंध निदेशक, हीग-हाउसिंग कॉलोनी बहादुरपुर,
 पटना के माध्यम से।

... .. उत्तरदाता/ओं

=====

उपस्थिति :

याचिकाकर्ता/ओं के लिए :	श्री विश्वजीत सिंह, अधिवक्ता
राज्य के लिए :	श्री पंकज कुमार, एससी-12
	श्री अनुज कुमार, एससी-12 से एसी
उत्तरदाता/ओं के लिए :	श्री सतीश कुमार सिन्हा, अधिवक्ता।

=====

गणपूर्ति: माननीय न्यायमूर्ति श्री मोहित कुमार शाह

मौखिक निर्णय

तारीख: 21-09-2023

वर्तमान रिट याचिका उत्तरदाता अधिकारियों को याचिकाकर्ता के बेटे रंजीत कुमार की मृत्यु के कारण उचित मुआवजे का भुगतान करने का निर्देश देने के लिए दायर की गई है, जिसकी एक दुर्घटना में मृत्यु हो गई थी, जो कंकड़बाग में स्थित एक खुले नाले में गिरने के कारण हुई थी, जिसका निर्माण राष्ट्रीय भवन निर्माण निगम (इसके बाद

"एन.बी.सी.सी." के रूप में संदर्भित) द्वारा किया जा रहा था।

2. याचिकाकर्ता के अनुसार मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि 19.1.2010 को याचिकाकर्ता का बेटा अपने दोस्त के साथ बाइक से अपने घर लौट रहा था और रास्ते में वे एक खुले नाले में गिर गए, जिसका निर्माण एन.बी.सी.सी. द्वारा किया जा रहा था और जिसे 20 फीट गहरा खोदा गया था, जिससे याचिकाकर्ता के बेटे की मौत हो गई। इसके बाद, दिनांक 20.1.2010 को पत्रकार नगर थाना मामला सं. 13/2010 की एक प्राथमिकी दर्ज की गई। यह दलील दी जाती है कि एन.बी.सी.सी. द्वारा विचाराधीन क्षेत्र में अवरोध किए बिना निर्माण कार्य लापरवाही से किया जा रहा था। यह भी दलील दी जाती है कि पुलिस ने मामले की जांच की थी और दिनांक 31.7.2010 वाले आरोप पत्र दायर किया था, जिसमें यह कहा गया था कि मामले की जांच, घटना स्थल के निरीक्षण और उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर, भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग-II के तहत ठेकेदार, गबुधण सिंह उर्फ गबुधण कुमार उर्फ जी कुमार के खिलाफ मामला सही पाया गया है। कहा जाता है कि उक्त ठेकेदार को एन.बी.सी.सी. द्वारा नियुक्त किया गया था और विचाराधीन काम उसे उप-पट्टे पर दिया गया था।

3. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय द्वारा **रामा नंद राय बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 2021 (1) पी.एल.जे.आर. 361** में प्रस्तुत मामले में दिए गए निर्णय का हवाला देते हुए तर्क दिया है कि मानवाधिकारों, मौलिक स्वतंत्रताओं के उल्लंघन और सरकारी प्राधिकारियों और उसके उपकरणों की ढिलाई और उदासीनता के कारण हुई क्षतियों के लिए लोक विधि में मुआवजे का दावा एक स्वीकृत उपाय है, इसलिए, मुआवजा प्रदान करने के लिए वर्तमान रिट याचिका दायर की गई है। यह भी दलील दी गई है कि मौद्रिक या आर्थिक मुआवजा रिट न्यायालय द्वारा बहुत अच्छी तरह से प्रदान किया जा सकता है और यह एक नागरिक के जीवन के मौलिक अधिकार के स्थापित उल्लंघन के निवारण के लिए एक उचित और प्रभावी/उपयुक्त उपाय है और

याचिकाकर्ता का ऐसा दावा कठोर दायित्व का सिद्धांत पर आधारित है, जिसके लिए संप्रभु प्रतिरक्षा का बचाव उपलब्ध नहीं है।

4. इसके विपरीत, एन.बी.सी.सी. के विद्वान अधिवक्ता ने दलील दी है कि विचाराधीन काम को उपरोक्त ठेकेदार को उप-पट्टे पर दिया गया था और विचाराधीन काम शुरू होने से पहले, पर्याप्त सावधानी बरती गई थी, विचाराधीन क्षेत्र का अवरोध किया गया था और समाचार पत्रों में नोटिस भी जारी किया गया था, जिसमें कहा गया था कि चूंकि कंकड़बाग में मुख्य नाले के निर्माण का काम चल रहा है, इसलिए टेंपो पड़ाव से लेकर जोगीपुर पंप घर तक और विचाराधीन क्षेत्र को अवरोध किया गया है, यह अनुरोध किया जाता है कि विचाराधीन सड़क को पार करने के लिए मोड़ या मुख्य सड़क का उपयोग किया जाए। इस प्रकार यह तर्क दिया जाता है कि चूंकि एन.बी.सी.सी. की ओर से कोई लापरवाही नहीं की गई है, इसलिए वह याचिकाकर्ता को उसके बेटे की मृत्यु के बदले में कोई मुआवजा देने के लिए उत्तरदायी नहीं है।

5. एन.बी.सी.सी. के विद्वान अधिवक्ता ने आगे दलील दी है कि उपरोक्त ठेकेदार की मृत्यु अंतराल अवधि के दौरान हुई है, इसलिए आपराधिक कार्यवाही समाप्त हो गई है। अंत में, यह दलील दी जाती है कि याचिकाकर्ता को मुआवजे के लिए राज्य सरकार से संपर्क करके आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 के तहत प्रदान किए गए उपचार का लाभ उठाना चाहिए था।

6. जहाँ तक राज्य सरकार का संबंध है, उसने वर्तमान मामले से अपना पल्ला झाड़ लिया है और दलील दी है कि वर्तमान मामले में निर्णय लेना एन.बी.सी.सी. का काम है।

7. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और पाया है कि प्राथमिक मुद्दा, जिसे संबोधित करने की आवश्यकता है, यह है कि क्या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत, याचिकाकर्ता के बेटे की मृत्यु के बदले मुआवजे के अनुदान के लिए

वर्तमान रिट याचिका, उत्तरदाता-एन.बी.सी.सी. द्वारा बनाए जा रहे नाले में गिरने के कारण, बनाए रखने योग्य है या नहीं। फिर भी एक अन्य मुद्दे पर विचार करने की आवश्यकता है कि क्या एन.बी.सी.सी. ने यह सुनिश्चित करने के लिए पूरी देखभाल और एहतियात बरती थी कि कोई दुर्घटना न हो, लेकिन फिर भी यदि दुर्घटना हो तो, क्या वह अभी भी मुआवजे का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होगा।

8. अब पहले मुद्दे पर ध्यान देते हुए कि क्या यह न्यायालय ऐसे मामलों में मुआवजा देने के लिए सक्षम है या नहीं, यह न्यायालय सर्वप्रथम माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **उत्तर प्रदेश राज्य सहकारी भूमि विकास बैंक लिमिटेड बनाम चंद्रभान दुबे एवं अन्य** के मामले में दिए गए निर्णय का उल्लेख करेगा, जिसे (1999) 1 एस.सी.सी. 741, कंडिका सं. 27 में प्रतिवेदित किया गया है, जिसका प्रतिपादन नीचे किया जा रहा है:

“इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अपीलकर्ता पर राज्य सरकार का नियंत्रण सर्वव्यापी है और कर्मचारियों को वैधानिक संरक्षण प्राप्त है और इसलिए अपीलकर्ता राज्य का एक प्राधिकरण या उपक्रम होने के नाते, संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय के रिट क्षेत्राधिकार के अधीन होगा, इस प्रश्न की आगे जांच करने की आवश्यकता नहीं है कि क्या अनुच्छेद 226 लोक विधि और निजी विधि के बीच विभाजन करता है। प्रथम दृष्टया में, अनुच्छेद 226 की भाषा से ऐसा कोई विभाजन प्रतीत नहीं होता है। अनुच्छेद की स्पष्ट भाषा को समझने के लिए, हमारे लिए यह आवश्यक नहीं है कि हम अंग्रेजी न्यायालयों के फैसले पर भरोसा करें जैसा कि इस न्यायालय की पिछली पीठों द्वारा सही चेतावनी दी गई थी। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि अनुच्छेद 226 उच्च न्यायालय को किसी भी प्राधिकारी या व्यक्ति को आदेश या निर्देश जारी करने का अधिकार देते हुए लोक और निजी कार्यों

के बीच कोई अंतर नहीं करता है। इस मामले में हमारे लिए यह आवश्यक नहीं है कि हम इस प्रश्न पर विचार करें कि बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार पृच्छा और उत्प्रेषण रिटों की प्रकृति, दायरा और व्यापकता क्या है। ये निश्चित रूप से अंग्रेजी न्यायशास्त्र प्रणाली पर आधारित हैं। संविधान का अनुच्छेद 226 ऐसे निर्देशों और आदेशों की भी बात करता है जो किसी भी व्यक्ति या प्राधिकरण को जारी किए जा सकते हैं जिनमें उपयुक्त मामलों में कोई भी सरकार शामिल है। अनुच्छेद 367 के खंड (1) के अंतर्गत, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, सामान्य खंड अधिनियम, 1897, अनुच्छेद 372 के अंतर्गत किए जाने वाले किसी भी अनुकूलन और संशोधन के अधीन, संविधान की व्याख्या के लिए उसी प्रकार लागू होगा जैसे वह भारत अधिराज्य के विधानमंडल के किसी अधिनियम की व्याख्या के लिए लागू होता है। सामान्य खंड अधिनियम की धारा 2(42) के अंतर्गत "व्यक्ति" में कोई भी कंपनी या संघ या व्यक्तियों का संगठन शामिल होगा, चाहे वह निगमित हो या नहीं। संविधान कोई विधि नहीं है। यह सभी कानूनों का एक स्रोत है। जब अनुच्छेद 226 की भाषा स्पष्ट है, तो हम उच्च न्यायालयों को उन शब्दों पर व्याख्या करके उनके क्षेत्राधिकार को सीमित करने के लिए बाध्य नहीं कर सकते हैं जो उनके क्षेत्राधिकार को सीमित करेंगे। जब किसी नागरिक या व्यक्ति के साथ अन्याय किया जाता है, तो उच्च न्यायालय उसकी रक्षा के लिए कदम उठाएगा, चाहे वह राज्य द्वारा, राज्य का एक उपक्रम, कंपनी या सहकारी समिति या संघ या व्यक्तियों का संगठन, चाहे निगमित हो या नहीं, या यहां तक कि एक व्यक्ति भी के द्वारा गलत काम किया गया हो। उल्लंघन किया गया अधिकार संविधान के भाग III या किसी अन्य अधिकार के तहत हो सकता है जो वैध रूप से बनाया गया विधि के द्वारा प्रदान किया

जा सकता है। लेकिन फिर संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालयों को प्रदान की गई शक्ति इतनी विशाल है कि इस न्यायालय ने कुछ दिशानिर्देश निर्धारित किए हैं और स्वयं लागू की गई सीमाओं को वहां रखा गया है जिसके अधीन उच्च न्यायालय क्षेत्राधिकार का प्रयोग करेंगे, लेकिन वे दिशानिर्देश सभी परिस्थितियों में अनिवार्य नहीं हो सकते हैं। उच्च न्यायालय तब हस्तक्षेप नहीं करता जब कोई समान रूप से प्रभावी वैकल्पिक उपाय उपलब्ध हो या जब किसी गलत कार्य को सुधारने या किसी अधिकार को लागू करने के लिए कोई स्थापित प्रक्रिया मौजूद हो। किसी पक्ष को दीवानी और आपराधिक मुकदमे-बाजी के सामान्य माध्यम को दरकिनार करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। उच्च न्यायालय अनुच्छेद 226 के तहत अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते समय एक कहावत वाले "अनियंत्रित/लापरवाह" की तरह काम नहीं कर सकता है।

9. एक अन्य निर्णय जिसका मैं उल्लेख करना चाहूंगा, वह माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा एयर इंडिया स्टेट्यूटरी कॉर्पोरेशन एवं अन्य बनाम यूनाइटेड लेबर यूनियन एवं अन्य के मामले में दिया गया निर्णय है, जिसकी रिपोर्ट (1997) 9 एस.सी.सी. 377, कंडिका सं. 59 में दी गई है, जिसका अंश नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:-

"संस्थापकों ने संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय की शक्ति पर सिवाय स्व-लगाए गए प्रतिबंधों के कोई सीमा या बंधन नहीं लगाया। न्यायालय के हाथ इतने लंबे हैं कि वह जहाँ कहीं भी अन्याय हो, वहाँ पहुँच सकता है। न्यायालय, एक सतर्क प्रहरी के रूप में, दिए गए तथ्यों के आधार पर न्याय प्रदान करता है."

10. मानवाधिकारों, मौलिक स्वतंत्रताओं के उल्लंघन और सरकारी अधिकारियों की ढिलाई एवं उदासीनता के कारण हुई क्षतियों के लिए मुआवजे का दावा लोक विधि में एक

स्वीकृत उपाय है। इस मामले के इस पहलू को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा *नीलाबती बेहरा (श्रीमती) उर्फ ललिता बेहरा बनाम उड़ीसा राज्य एवं अन्य, (1993) 2 एस.सी.सी. 746* में प्रस्तुत मामले में दिए गए निर्णय के कंडिका सं. 17 में उपयुक्त रूप से प्रस्तुत किया गया है।

11. अब दोष-रहित उत्तरदायित्व के सिद्धांत का उल्लेख करना समीचीन होगा। यह सिद्धांत *रायलैंड्स बनाम फ्लेचर* के प्रसिद्ध मामले में प्रतिपादित किया गया था, जिसकी रिपोर्ट *(1868) एल.आर. 3 एच.एल. 330* में दी गई थी। इस मामले में उत्तरदाता (जॉन रायलैंड्स और जेहू हॉरॉक्स), जो एक मिल के मालिक थे, ने अपनी मिल को पानी की आपूर्ति हेतु अपनी जमीन पर एक जलाशय बनाने के लिए स्वतंत्र ठेकेदारों को रखा था। काम के दौरान ठेकेदारों को उत्तरदाताओं की जमीन में कुछ पुराने शाफ्ट और रास्ते मिले, जो वादी की खदानों से जुड़े थे, लेकिन ठेकेदार अपनी लापरवाही के कारण यह पता नहीं लगा सका कि शाफ्ट वादी की खदानों से जुड़ा था, क्योंकि शाफ्ट मिट्टी से भरा हुआ था, इसलिए उसने शाफ्ट को बंद नहीं किया। परिणामस्वरूप, जब जलाशय भर गया, तो पानी शाफ्ट से नीचे निकल गया और वादी की खदानों में पानी भर गया, जिससे नुकसान हुआ।

मूल रूप से "फ्लेचर बनाम रायलैंड्स" शीर्षक वाले इस मुकदमे की सुनवाई लिवरपूल समर असीज़ 1862 में हुई थी और फैसला उत्तरदाताओं के पक्ष में आया था। वादी ने एक्सचेकर चेंबर न्यायालय में एक त्रुटि रिट दायर की, जिसने उसे फैसला सुनाया, हालाँकि उत्तरदाता न तो स्वयं लापरवाह था और न ही अपने स्वतंत्र ठेकेदारों, जो उनके कर्मचारी नहीं थे, की लापरवाही के लिए लापरवाही के अपकृत्य में परोक्ष रूप से उत्तरदायी था। इस मामले में दायित्व का आधार न्यायमूर्ति ब्लैकबर्न द्वारा इस प्रकार प्रतिपादित किया गया था:-

“हम सोचते हैं कि विधि का सही नियम यह है कि जो व्यक्ति अपने उद्देश्यों के लिए अपनी भूमि पर कुछ भी लाता है और इकट्ठा करता है और वहाँ

कुछ भी रखता है, अगर वह बच जाता है, तो उसे अपने जोखिम में रखना चाहिए, और यदि वह ऐसा नहीं करता है, तो वह सभी नुकसान के लिए प्रथम दृष्टया जवाबदेह है जो उसके निकलने का स्वाभाविक परिणाम है। वह यह बताकर खुद को माफ कर सकता है कि निकलनेका कारण वादी की चूक थी; या शायद कि निकलने का कारण बड़ी गलती थी, या दैवीय घटना था; लेकिन चूंकि इस तरह का कुछ भी यहां मौजूद नहीं है, इसलिए यह पूछना अनावश्यक है कि क्या बहाना पर्याप्त होगा।”

एक्सचेकर चैंबर न्यायालय में पराजित होने पर, उत्तरदाताओं ने हाउस ऑफ लॉर्ड्स में अपील की, जहाँ मामले का शीर्षक "रायलैंड्स बनाम फ्लेचर" रखा गया, जिसने न्यायमूर्ति ब्लैकबर्न के फैसले को बरकरार रखा, हालाँकि, न्यायमूर्ति केन्स द्वारा दी गई एक महत्वपूर्ण विशिष्टता के साथ, अर्थात् दायित्व तब उत्पन्न होगा जब उत्तरदाता ने भूमि का 'गैर-प्राकृतिक उपयोग' किया हो। इस प्रकार अंततः "कोई दोष दायित्व नहीं" का नियम स्थापित हुआ, जो इस प्रकार बताया गया है:-

“एक व्यक्ति जो भूमि के गैर-प्राकृतिक उपयोग के दौरान, उस पर किसी ऐसी वस्तु के संचय के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है जो उसके बाहर निकलने पर नुकसान पहुँचाने की संभावना रखती है, वह किसी अन्य व्यक्ति की भूमि के उपयोग में उस हस्तक्षेप के लिए उत्तरदायी है जो उस वस्तु के उसकी भूमि से बाहर निकलने के परिणामस्वरूप होता है।”

12. राइलैंड्स बनाम फ्लेचर (उपरोक्त) में उपरोक्त नियम की बाद में व्याख्या विभिन्न प्रकार की चीजों को शामिल करने के लिए की गई, जो 'निकलने पर नुकसान पहुँचाने की संभावना' रखती हैं, भले ही वे स्वयं खतरनाक हों या नहीं, जैसे पानी, बिजली, विस्फोट, तेल, हानिकारक धुआँ, कोयला खदान से निकलने वाला मलबा, जहरीली वनस्पति, आदि। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **एम. सी. मेहता एवं अन्य बनाम भारत**

संघ एवं अन्य, (1987) 1 एस.सी.सी. 395 में रिपोर्ट किए गए मामले में यह माना कि चूँकि यह नियम *रायलैन्ड्स बनाम फ्लेचर* (उपरोक्त) के मामले में 19 वीं शताब्दी में विकसित किया गया था, ऐसे समय में जब विज्ञान और प्रौद्योगिकी का इतना विकास नहीं हुआ था, इसलिए यह संवैधानिक मानदंडों के अनुरूप दायित्व के किसी भी मानक को विकसित करने में कोई मार्गदर्शन नहीं दे सकता। विधि को तेजी से बदलते समाज की जरूरतों को पूरा करने और देश में हो रहे आर्थिक विकास के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने के लिए विकसित होना होगा। इस प्रकार, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दिया:-

"31.हमारा मानना है कि कोई उद्यम जो किसी खतरनाक या स्वाभाविक रूप से खतरनाक उद्योग में लगा हुआ है, जो कारखाने में काम करने वाले और आसपास के क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के स्वास्थ्य और सुरक्षा के लिए संभावित खतरा पैदा करता है, उसका समुदाय के प्रति यह पूर्ण और अप्रतिनिधित्वीय कर्तव्य है कि वह यह सुनिश्चित करे कि उसके द्वारा की गई गतिविधि की खतरनाक या स्वाभाविक रूप से खतरनाक प्रकृति के कारण किसी को कोई नुकसान न हो। उद्यम को यह सुनिश्चित करने के लिए बाध्य होना चाहिए कि जिस खतरनाक या स्वाभाविक रूप से खतरनाक गतिविधि में वह लगा हुआ है, उसे सुरक्षा के उच्चतम मानकों के साथ संचालित किया जाना चाहिए और यदि ऐसी गतिविधि के कारण कोई नुकसान होता है, तो उद्यम को ऐसे नुकसान की भरपाई के लिए पूर्ण रूप से उत्तरदायी होना चाहिए और उद्यम के लिए यह कहना कोई जवाब नहीं होना चाहिए कि उसने सभी उचित सावधानी बरती थी और नुकसान उसकी ओर से बिना किसी लापरवाही के हुआ था। चूँकि उद्यम द्वारा की गई खतरनाक या स्वाभाविक रूप से खतरनाक गतिविधि के कारण नुकसान पहुँचाने वाले व्यक्ति संचालन की

प्रक्रिया को उस पदार्थ या किसी अन्य संबंधित तत्व की खतरनाक तैयारी से अलग करने की स्थिति में नहीं होंगे जिससे नुकसान हुआ है, इसलिए उद्यम को खतरनाक या स्वाभाविक रूप से खतरनाक गतिविधि को जारी रखने की सामाजिक लागत के एक हिस्से के रूप में ऐसी क्षति के लिए सख्ती से उत्तरदायी ठहराया जाना चाहिए। यदि उद्यम को अपने लाभ के लिए खतरनाक या स्वाभाविक रूप से खतरनाक गतिविधि करने की अनुमति है, तो विधि को यह मान लेना चाहिए कि ऐसी अनुमति इस शर्त पर है कि उद्यम ऐसी खतरनाक या स्वाभाविक रूप से खतरनाक गतिविधि के कारण होने वाली किसी भी दुर्घटना की लागत को अपने उपरिव्यय के एक उपयुक्त मद के रूप में वहन करेगा। निजी लाभ के लिए ऐसी खतरनाक या स्वाभाविक रूप से खतरनाक गतिविधि को केवल इस शर्त पर सहन किया जा सकता है कि ऐसी खतरनाक या स्वाभाविक रूप से खतरनाक गतिविधि में लगा उद्यम उन सभी लोगों को क्षतिपूर्ति प्रदान करे जो ऐसी खतरनाक या स्वाभाविक रूप से खतरनाक गतिविधि के कारण पीड़ित हैं, चाहे वह सावधानीपूर्वक की गई हो या नहीं। यह सिद्धांत इस आधार पर भी टिकाऊ है कि उद्यम के पास ही खतरों का पता लगाने और उनसे बचाव करने और संभावित खतरों के प्रति चेतावनी देने के संप्रक्रम हैं। इसलिए हम यह मानेंगे कि जहाँ कोई उद्यम किसी खतरनाक या स्वाभाविक रूप से खतरनाक गतिविधि में लगा हुआ है और ऐसी खतरनाक या स्वाभाविक रूप से खतरनाक गतिविधि के संचालन में दुर्घटना के कारण किसी को नुकसान पहुँचता है, उदाहरण के लिए, जहरीली गैस का रिसाव, तो उद्यम उन सभी को मुआवजा देने के लिए पूरी तरह से उत्तरदायी है जो दुर्घटना से प्रभावित हुए हैं और यह दायित्व रायलैन्ड्स बनाम फ्लेचर (उपरोक्त) के नियम के तहत कठोर दायित्व के अपकृत्य सिद्धांत के

संबंध में लागू होने वाले किसी भी अपवाद के अधीन नहीं है।

13. यह अब विधि का एक सर्वमान्य प्रस्ताव है कि मौद्रिक या आर्थिक मुआवजा एक रिट न्यायालय द्वारा दिया जा सकता है और यह एक नागरिक के जीवन के मौलिक अधिकार के स्थापित उल्लंघन के निवारण के लिए एक उचित और वास्तव में एक प्रभावी और कभी-कभी शायद एकमात्र उपयुक्त उपाय है। नागरिक का दावा कठोर दायित्व के सिद्धांत पर आधारित है जिसके लिए संप्रभु प्रतिरक्षा का बचाव उपलब्ध नहीं है और नागरिक को राज्य से मुआवजे की राशि प्राप्त करनी चाहिए। इस मामले के इस पहलू पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा समय-समय पर कई निर्णयों में विचार किया गया है, जिनमें से कुछ का उल्लेख नीचे किया गया हैः.

I. (1983) 4 एस.सी.सी. 141 [रुदुल साह बनाम बिहार राज्य और अन्य।]

II. (1997) 1 एस.सी.सी. 416 [डी.के. बसु बनाम पश्चिम बंगाल राज्य]

III. (2000) 2 एस.सी.सी. 465 [अध्यक्ष, रेलवे बोर्ड और अन्य बनाम चंद्रिमा दास (श्रीमती) एवं अन्य।]

IV. (2006) 3 एस.सी.सी. 178 [सूबे सिंह बनाम हरियाणा राज्य और अन्य।]

V. (2011) 14 एस.सी.सी. 481 [दिल्ली नगर निगम, दिल्ली बनाम उपहार त्रासदी पीड़ित संघ और अन्य।]

VI. (2012) 9 एस.सी.सी. 791 [रघुवंश दीवानचंद भसीन बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य।]

VII. (2014) 4 एस.सी.सी. 786 [के संदर्भ में: व्यापार और वित्तीय समाचार में दिनांक 23.01.2014 को प्रकाशित, भारतीय महिला का कहना है कि ग्राम न्यायालय के आदेश पर उसके साथ सामूहिक बलात्कार हुआ]

VIII. (2014) 15 एस.सी.सी. 1 [रमन बनाम उत्तर हरियाणा बिजली वितरण निगम लिमिटेड और अन्य।]

IX. (2016) 14 एस.सी.सी. 58 [अनिल कुमार गुप्ता बनाम भारत संघ और अन्य।]

X. (2016) 15 एस.सी.सी. 525 [अनीता ठाकुर और अन्य बनाम जम्मू और कश्मीर सरकार और अन्य]

XI. (2018) 11 एस.सी.सी. 572 [सुश्री जेड बनाम बिहार राज्य और अन्य।]

14. इसी तरह के एक अन्य मामले में माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा **मधु कौर बनाम राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार एवं अन्य** (रिट याचिका (दी) सं. 1077/2007) के मामले में दिए गए एक अन्य निर्णय का उल्लेख करना समीचीन होगा, जिसका निर्णय 7.7.2009 को हुआ था।।

15. उपर्युक्त निर्णयों से यह स्थिति उभर कर आती है कि संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत किसी कार्यवाही में मुआवजा देना लोक विधि में उपलब्ध एक उपाय है, जो मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के लिए कठोर दायित्व पर आधारित है, जिन पर संप्रभु प्रतिरक्षा का सिद्धांत लागू नहीं होता है, भले ही यह निजी विधि में अपकृत्य पर आधारित किसी कार्रवाई में बचाव के रूप में उपलब्ध हो। यह भी विधि का एक सर्वमान्य प्रस्ताव है कि मौद्रिक या आर्थिक मुआवजा एक उपयुक्त और वास्तव में प्रभावी और कभी-कभी शायद एकमात्र उपयुक्त उपाय है, जो लोक सेवकों द्वारा नागरिक के जीवन के मौलिक अधिकार के स्थापित उल्लंघन के निवारण के लिए है और राज्य उनके कार्यों के लिए प्रतिरूप रूप से उत्तरदायी है। नागरिक का दावा कठोर दायित्व के सिद्धांत पर आधारित है जिसके लिए संप्रभु प्रतिरक्षा का बचाव उपलब्ध नहीं है और नागरिक को राज्य और/या उसके उपकरणों से मुआवजे की राशि प्राप्त करनी होगी जिसके पास गलत काम करने वाले से क्षतिपूर्ति पाने का अधिकार होगा। इसलिए, जब न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 या 226 के तहत कार्यवाही में "मुआवजा" देकर राहत प्रदान करता है, मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन या संरक्षण की मांग करता है, तो वह ऐसा लोक विधि के

तहत करता है, जिसमें अपराधी को दंडित किया जाता है और राज्य पर लोक गलती के लिए दायित्व तय किया जाता है, जो नागरिक के मौलिक अधिकारों की रक्षा करने के अपने लोक कर्तव्य में विफल रहा है।

16. इस प्रकार यह निष्कर्ष निकलता है कि मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रताओं के उल्लंघन के लिए 'लोक विधि में मुआवजे का दावा' जिसकी सुरक्षा की गारंटी संविधान में दी गई है, ऐसे अधिकारों के प्रवर्तन और संरक्षण के लिए एक स्वीकृत उपाय है और मौलिक अधिकार के प्रवर्तन के लिए प्रदान किए गए संवैधानिक उपाय का सहारा लेकर कठोर दायित्व पर आधारित ऐसा दावा, मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के परिणामस्वरूप 'अपकृत्य में क्षति के लिए निजी विधि' में दिए गए उपाय से अलग है और इसके अतिरिक्त भी है।

17. मुआवजे के आकलन में, प्रतिपूरक तत्व पर जोर होना चाहिए, ना की दंडात्मक तत्व पर। उद्देश्य घावों पर मरहम लगाना है, न कि उत्क्रामक या अपराधी को दंडित करना, क्योंकि अपराधी को अपराध के लिए उचित दंड देना (मुआवजे की परवाह किए बिना) उन आपराधिक न्यायालयों पर छोड़ दिया जाना चाहिए जिसमें अपराधी पर मुकदमा चलाया जाता है, और राज्य, कानूनन, ऐसा करने के लिए बाध्य है। यह भी एक समान रूप से स्थापित कानून है कि लोक विधि के क्षेत्राधिकार में मुआवजे का निर्णय, क्षतिपूर्ति के लिए दीवानी मुकदमे जैसी किसी अन्य कार्रवाई पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालता, जो राज्य के अधिकारियों द्वारा किए गए अपकृत्य लोक विधि के लिए पीड़ित या मृतक पीड़ित के उत्तराधिकारियों को उसी मामले के संबंध में कानूनी रूप से उपलब्ध है। मुआवजे की मात्रा, निश्चित रूप से, प्रत्येक मामले के विशिष्ट तथ्यों पर निर्भर करेगी और इस संबंध में कोई निश्चित सूत्र विकसित नहीं किया जा सकता। लोक विधि क्षेत्राधिकार के अंतर्गत, नागरिक के मौलिक अधिकारों के स्थापित उल्लंघन के लिए क्षतिपूर्ति हेतु राहत, पारंपरिक उपचारों के अतिरिक्त है, न कि उनका हनन। न्यायालय द्वारा निर्धारित और

राज्य द्वारा किए गए अन्याय के निवारण हेतु भुगतान की गई क्षतिपूर्ति की राशि, किसी भी मामले में, किसी भी राशि के विरुद्ध समायोजित की जा सकती है जो किसी दीवानी मुकदमे में दावेदार को क्षतिपूर्ति के रूप में प्रदान की जा सकती है।

18. इस प्रकार, निर्विवाद उपपरिणाम, कम से कम उन मामलों में जहाँ प्रासंगिक तथ्य विवाद में नहीं हैं, जहाँ उत्तरदाता प्राधिकारियों के कार्य और चूक अभिलेख में स्थापित हैं और परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता के मौलिक अधिकार का हनन हुआ है, यह है कि रिट न्यायालय मौद्रिक मुआवजा प्रदान कर सकता है। निस्संदेह, यह ऐसे मामले को समाचीन करेगा जहाँ राज्य या उसके तंत्र ने उस पर लगाए गए देखभाल के अपने कर्तव्य का निर्वहन करने में विफल रहा है, जिसके परिणामस्वरूप किसी व्यक्ति के जीवन या अंग का हनन हुआ है। इस प्रकार, संविधान का अनुच्छेद 21 लागू होता है और संविधान के अनुच्छेद 226 का उपयोग मौद्रिक मुआवजे का दावा करने के लिए किया जा सकता है, क्योंकि ऐसा उपाय लोक विधि में उपलब्ध है और मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के लिए कठोर दायित्व पर आधारित है।

19. इस समय, "कठोर दायित्व" के मुद्दे पर कुछ निर्णयों का उल्लेख करना भी उचित होगा, जैसे कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा *म. प्र. विद्युत बोर्ड बनाम शैल कुमारी एवं अन्य*, (2002) 2 एस.सी.सी. 162 में रिपोर्ट किए गए मामले में दिया गया निर्णय और *रमन बनाम उत्तर हरियाणा बिजली वितरण निगम लिमिटेड एवं अन्य*, (2014) 15 एस.सी.सी. 1 में रिपोर्ट किए गए मामले में दिया गया निर्णय है।

20. वर्तमान मामले में, यह विवाद में नहीं है कि याचिकाकर्ता के बेटे की मृत्यु उत्तरदाता-एन.बी.सी.सी. द्वारा बनाए जा रहे नाले में गिरने के कारण हुई है और उक्त तथ्य की पुलिस द्वारा की गई जांच में भी पुष्टि की गई है, जिसने 2010 के पत्रकार नगर थाना मामला सं. 13 के संबंध में एक आरोप पत्र भी दायर किया है, जिसमें ठेकेदार को प्रथम दृष्टया कथित अपराधों के लिए दोषी ठहराया गया है, हालांकि, उत्तरदाता-एन.बी.सी.सी. ने

दृढ़ता से इनकार किया है कि उनकी ओर से कोई लापरवाही नहीं की गई थी, क्योंकि घटनास्थल पर उचित अवरोध की गई थी और समाचार पत्रों में चेतावनी नोटिस प्रकाशित किया गया था, जैसा कि पिछले अनुच्छेद में ऊपर उल्लेख किया गया है।

अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों पर विचार करते हुए, इस न्यायालय ने पाया कि यह विवाद में नहीं है कि याचिकाकर्ता के बेटे की मृत्यु एन.बी.सी.सी. द्वारा निर्मित किए जा रहे नाले में गिरने के कारण हुई है। इस मामले को ध्यान में रखते हुए, चूँकि यह स्थापित है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत आश्वस्त अप्रतिबंधित अधिकारों का उल्लंघन हुआ है, यह न्यायालय मौद्रिक क्षतिपूर्ति प्रदान करने के लिए सक्षम है, विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि राज्य और उसके उपक्रम, अर्थात् एन.बी.सी.सी., अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने में विफल रहा है, इस तथ्य के बावजूद कि "कठोर दायित्व" का सिद्धांत, मानव जीवन के लिए खतरनाक या जोखिमपूर्ण जोखिम वाली गतिविधि करने वाले व्यक्ति पर भी दायित्व डालता है, भले ही यह मान लिया गया हो कि सभी सुरक्षा उपाय अपनाए गए थे। इसलिए, उत्तरदाता-एन.बी.सी.सी. के प्रबंधकों/ठेकेदारों की ओर से किसी भी प्रकार की लापरवाही या असावधानी के बावजूद, एन.बी.सी.सी. अपकृत्य विधि के तहत याचिकाकर्ता को उसके पुत्र की मृत्यु के कारण हुई क्षति की भरपाई करने के लिए उत्तरदायी है। मामले का यह पहलू माननीय सर्वोच्च न्यायालय के विभिन्न निर्णयों द्वारा पूरी तरह से सम्मिलित है, जैसा कि ऊपर पिछले अनुच्छेद में उल्लेख किया गया है, अतः मेरा मानना है कि मुआवजे के लिए वर्तमान रिट याचिका उत्तरदाताओं के विरुद्ध विचारणीय है और याचिकाकर्ता मुआवजे के लिए पात्र है।

21. अब, मैं दूसरे मुद्दे पर विचार करने के लिए आगे बढ़ता हूँ, अर्थात् याचिकाकर्ता को, वर्तमान मामले में, उसके बेटे की मृत्यु के लिए दिए जाने वाले मुआवजे की मात्रा के बारे में।

22. इस न्यायालय का मानना है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने *निज़ाम*

इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज बनाम प्रशांत एस. धनका एवं अन्य (2009) 6 एस.सी.सी. 1 में दर्ज मामले में मुआवजे की राशि की गणना और निर्धारण हेतु गुणक प्रणाली के उपयोग को अस्वीकार कर दिया है। इस संबंध में, नीचे दिए गए उक्त निर्णय के अनुच्छेद सं. 92 का संदर्भ देना उचित होगा:-

"92. उत्तरदाता के विद्वान अधिवक्ता, श्री तांदले ने आगे दलील दी है कि मुआवजा तय करने की उचित विधि गुणक विधि होगी। हमें इस दलील में कोई योग्यता नहीं दिखती। शिकायतकर्ता को किस तरह का नुकसान हुआ है, उसने जो खर्च किया है और भविष्य में करने की संभावना है और यह संभावना कि उसके चुने हुए क्षेत्र में उसकी उन्नति अब सीमित हो जाएगी, ये ऐसे मामले हैं जिनका गुणक विधि के तहत ध्यान नहीं रखा जा सकता।

23. महाप्रबंधक, केरल राज्य सड़क परिवहन निगम, त्रिवेंद्रम बनाम श्रीमती सुसम्मा थॉमस एवं अन्य, (1994) 2 एस.सी.सी. 176 में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दिया:-

"मात्रा के निर्धारण में इस बात का जवाब देना चाहिए कि *समकालीन* समाज "क्या उचित राशि मानेगा जैसे कि अपराधी को अपने पड़ोसियों के बीच अपना सिर उठाने और उनकी मंजूरी के साथ कहने की अनुमति होगी कि उसने उचित काम किया है। "सम्मानित राशि मामूली नहीं होनी चाहिए क्योंकि "विधि एक स्वतंत्र समाज में जीवन और अंगों को उदार पैमाने पर महत्व देता है"। इन सब का मतलब है कि दी गई राशि स्वीकृत कानूनी मानकों द्वारा निष्पक्ष और उचित होनी चाहिए।

24. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने *सूबे सिंह बनाम हरियाणा राज्य, ए.आई.आर. 2006 एस.सी. 1117* में इस प्रकार निर्णय दिया है:-

"इस प्रकार अब यह सर्वविदित है कि राज्य के विरुद्ध मुआवजा देना, किसी

लोक सेवक द्वारा अनुच्छेद 21 के अंतर्गत किसी मौलिक अधिकार के स्थापित उल्लंघन के निवारण हेतु एक उपयुक्त और प्रभावी उपाय है। हालाँकि, मुआवजे की मात्रा प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगी। इस प्रकार के मुआवजे (लोक विधि के उपाय के रूप में) का निर्णय, पीड़ित व्यक्ति द्वारा व्यवहार न्यायालय में अतिरिक्त मुआवजे का दावा करने, अपकृत्य में निजी विधि के उपाय को लागू करने में बाधा नहीं बनेगा, और न ही आपराधिक न्यायालय द्वारा दीवानी प्रक्रिया संहिता की धारा 357 के अंतर्गत मुआवजे का आदेश देने में बाधा बनेगा।"

25. *ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम राम प्रसाद वर्मा एवं अन्य, 2009*

(2) *एस.सी.सी. 712* में प्रतिवेदित मामले, मैं सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि "न्यायसंगत" शब्द को उसका तार्किक अर्थ दिया जाना चाहिए। हालाँकि, दिया गया मुआवजा कोई उपहार या लाभ का स्रोत नहीं हो सकता लेकिन, यह विचार करते समय कि क्या न्यायसंगत और समतापूर्ण होगा, सभी तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

26. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने *उपहार त्रासदी पीड़ितों के संघ एवं अन्य, (2011) 14 एस.सी.सी. 481* में रिपोर्ट किया, मैं कहा:-

"इसलिए, लोक विधि उपचार के माध्यम से मुआवजे के रूप में जो दिया जा सकता है, वह न केवल नाममात्र की उपशामक राशि होनी चाहिए, बल्कि कुछ और भी होनी चाहिए।

27. स्वीकार किया जाता है कि विचाराधीन घटना/दुर्घटना मोटर वाहन अधिनियम, 1988 (जिसे आगे "एमवी अधिनियम" कहा जाएगा) के प्रावधानों के अंतर्गत नहीं आती है। मेरे विचार से, याचिकाकर्ता को मिलने वाले हर्जाने की गणना के लिए मोटर वाहन अधिनियम का सहारा नहीं लिया जा सकता। परिणामस्वरूप, यह न्यायालय पाता है कि

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि को ध्यान में रखते हुए, बलात्कार सहित हिंसा आदि के पीड़ितों के मामलों में मुआवजा देने के संबंध में, जिसके परिणामस्वरूप स्थायी विकलांगता, शारीरिक अक्षमता, मानसिक चोट और मृत्यु होती है, जैसा कि वर्तमान मामले में, जैसा कि ऊपर डी.के. बसु (उपरोक्त), (1997) 1 एस.सी.सी. 416 में रिपोर्ट किया गया, चंद्रिमा दास (श्रीमती) और अन्य (उपरोक्त), (2000) 2 एस.सी.सी. 465 में रिपोर्ट किया गया, उपहार त्रासदी पीड़ित संघ और अन्य के मामलों में संदर्भित है। (उपरोक्त), (2011) 14 एस.सी.सी. 481 में रिपोर्ट किया गया, भारतीय महिला का कहना है कि ग्राम न्यायालय के आदेश पर सामूहिक बलात्कार किया गया (उपरोक्त), (2014) 4 एस.सी.सी. 786 में रिपोर्ट किया गया, रमन (उपरोक्त), (2014) 15 एस.सी.सी. 1 में रिपोर्ट किया गया, अनिल कुमार गुप्ता (उपरोक्त), (2016) 14 एस.सी.सी. 58 में रिपोर्ट किया गया, अनीता ठाकुर और अन्य (उपरोक्त), (2016) 15 एस.सी.सी. 525 में रिपोर्ट किया गया और सुश्री जेड (उपरोक्त), (2018) 11 एस.सी.सी. 572 में रिपोर्ट किया गया, वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, 10,00,000/- रुपये की राशि न्यायसंगत, उचित और पर्याप्त मुआवजा होगी। तदनुसार, मैं यह मानता हूँ और निर्देश देता हूँ कि याचिकाकर्ता उत्तरदाता-एनबीसीसी से मुआवजे के रूप में 10,00,000 रुपये (केवल दस लाख रुपये) प्राप्त करने का उत्तरदायी है।

28. वैकल्पिक रूप से, यदि मोटर वाहन अधिनियम, 1988 में प्रदान की गई गुणक पद्धति को मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर लागू किया जाता है, तो माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा *सरला वर्मा एवं अन्य बनाम दिल्ली परिवहन निगम एवं अन्य* (2009) 6 एस.सी.सी. 121 में रिपोर्ट किए गए मामले और *नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम प्रणय सेठी एवं अन्य* (2017) 16 एस.सी.सी. 680 में रिपोर्ट किए गए मामले में निर्धारित विधि के मद्देनजर, याचिकाकर्ता को उचित मुआवजे/आश्रितता की कुल हानि की राशि लगभग 15-18 लाख रुपये होगी।

29. उपरोक्त चर्चा के मद्देनजर, यह न्यायालय उत्तरदाता सं. 5 को निर्देश देना उचित और ठीक समझता है कि वह याचिकाकर्ता को उसके पुत्र की मृत्यु के बदले में मुआवजे के रूप में आज से चार सप्ताह के भीतर 10,00,000/- रुपये की एकमुश्त राशि का भुगतान करे।
30. रिट याचिका को अनुमति दी जाती है।

(मोहित कुमार शाह, न्यायमूर्ति)

अजय/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।